International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

परियत्ति और पटिपत्ति: एक संक्षिप्त विश्लेषण

डॉ. प्रेम दत्त सिंह मेधंकर

बौद्ध अध्ययन विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

Abstract

बुद्ध धम्म के परियत्ति, पटिपत्ति और पटीवेध ये तीन महत्वपूर्ण अंग है। यदि परियत्ति भगवान द्वारा उपदेशित धर्म है, तो पटिपत्ति बुद्ध धम्म का व्यावहारिक पक्ष है, और पटिवेध आन्तरिक अनुभूति है। बोधिसत्त्व जब आलार कालाम व उद्दक रामपुत्र से साधना सीखते हैं तो वे पहले ज्ञान प्राप्त करते हैं, जिसे परियत्ति कहते हैं। फिर निरञ्जरा नदी के किनारे उरूवेला में साधना करते हैं, जिसे पटिपत्ति कहते हैं, तब जाकर अनुभव प्राप्त होता है, जिसे पटिवेध कहते हैं। धम्म की स्थिरता केवल परियत्ति पर निर्भर है। यदि बुद्धवचन सुरक्षित है तो आचरण और अनुभव भी सम्भव है। जिस प्रकार मजबूत तटबंध वाला तालाब सूखता नहीं, उसी प्रकार तिपिटक रूपी परियत्ति सुरक्षित हो तो धम्म भी सुरक्षित रहेगा। परियत्ति (बुद्धवचन) की रक्षा धम्म की रक्षा है। जब परियत्ति लुप्त होती है, तब पटिपत्ति और पटिवेध भी लुप्त होते हैं। अत: बिना परियत्ति के पटिपत्ति और पटिवेध असंभव हैं। भगवान कहते हैं कि सच्चे धर्म को सुनना भी संसार में दुर्लभ है, परियत्ति, पटिपत्ति और पटिवेध ये तीन सच्चे धर्म हैं। जो शास्त्र, आचरण और अनुभव के रूप में प्रकट होते हैं। यदि शास्त्र रूपी धर्म नहीं होगा, तो प्रत्यक्ष अनुभव कभी संभव नहीं होगा। जब शास्त्र लुप्त हो जाते है, तब आचरण भी लुप्त हो जाता है; और जब आचरण समाप्त होता है, तब अनुभव भी लुप्त हो जाता है। इसका कारण यह है कि परियत्ति (शास्त्र) ही आचरण का कारण होता है। आचरण और अनुभव के लिए भी शास्त्र ही प्रमाण और मापक है। क्योंकि जब परियत्ति लुप्त हो जाती है, तब आचरण भी नष्ट हो जाता है, और जब आचरण नष्ट हो जाता है, तब अनुभूति भी नहीं रह पाती। इस प्रकार परियत्ति शास्त्र है, पटिपत्ति साधना है और पटिवेध अनुभव है। तथा बिना परियत्ति के न तो सही साधना संभव है, न ही अनुभवजन्य बोध।

परियत्ति:

परियत्ति का अर्थ पर्याप्ति है, जो कि बुद्ध धम्म का सैद्धांतिक पक्ष है, जिसके विषय में विभङ्गपाळि अट्ठकथा में कहा गया है कि **'परियत्ति' नाम बुद्धवचनं।**[1] अर्थात बुद्ध वचन का नाम ही परियत्ति है। सुत्त, विनय और अभिधम्म तीनों पिटकों को विभंग अट्ठकथा में **'परियत्तीति तीणि पिटकानि।**[2] अर्थात तीनों पिटकों को परियत्ति कहा गया है, जिसके अन्तर्गत सुत्त, गेय्य, वेय्याकरण, गाथा, उदान, इतिवुत्तक, जातक, अब्भुतधम्म और वेदल्ल आदि नवाङ्गों में बुद्ध धम्म का पारायण करना है। बुद्ध वचनों का पठन करना, श्रवण करना, या गहन अध्ययन करना परियत्ति है, जबकि विपश्यना साधना द्वारा बुद्ध वचन का साक्षात्कार करके अपने जीवन को सार्थक बना लेना पटिपत्ति है।

अङ्गुत्तरनिकाय-अट्ठकथा में कहा गया है कि **'परियत्तीति तेपिटकं बुद्धवचनं साट्ठकथापालि।**[3] अर्थात् तिपिटक बुद्धवचन और अट्ठकथापालि ही परियत्ति है। बुद्ध की शिक्षा को शासन कहते हैं और परियत्ति को शासन का प्रमाण कहा गया है। इसी सन्दर्भ में विभङ्ग अट्ठकथा में कहा गया है कि **सासनट्ठितिया पन परियत्तियेव पमाणं।**[4] अर्थात शासन स्थित होने का परियत्ति प्रमाण है। बुद्ध की शिक्षाओं के प्रचार-प्रसार को शासन कहते हैं और यह तभी सम्भव है जब परियत्ति यानी कि बुद्ध वचन का अध्ययन सतत बना रहे इसलिए कहा गया है कि परियत्ति के स्थित होने से सासन स्थित होता है। संयुत्तनिकाय अट्ठकथा में परियत्ति को पटिपत्ति का कारण बताते हुए कहा गया है कि **परियत्ति पटिपत्तिया पच्चयो होति।**[5] अर्थात परियत्ति ही पटिपत्ति का प्रत्यय है। परियत्ति मूल बुद्ध वचनों का अधिगम है, जब हम पालि तिपिटक का अध्ययन करते हैं, तो हम परियत्ति के माध्यम से ज्ञानार्जन करते है। **तानियेव पञ्चवस्ससहस्सानि**[6] अर्थात् यह सासन पाँच हजार वर्षों तक स्थायी रहेगा। सासन का तात्पर्य बुद्ध की शिक्षाओं से है, जो परियत्ति पर आधारित है। **न हि परियत्तिया असति पटिवेधो अत्थी**[7] अर्थात् यदि परियत्ति नहीं होती है, तो पटिवेध भी संभव नहीं है। परियत्ति के बिना पटिवेध की प्राप्ति नहीं हो सकती। धर्म का अध्ययन और अभ्यास पटिवेध का आधार है। यदि परियत्ति नहीं है, तो साधक के पास सही दिशा में अभ्यास करने की समझ और मार्गदर्शन नहीं होगा। **पटिपत्तितोपि परियत्तिमेव पमाणं।** अर्थात् परियत्ति ही पटिपत्ति का प्रमाण है।

अर्थात् बुद्ध शिक्षा परियत्ति और पटिपत्ति के बीच के संबंध को उजागर करता है। अगर साधक के पास परियत्ति नहीं है, यानी उसने धम्म, विनय, और अभिधम्म का अध्ययन नहीं किया है, तो उसकी पटिपत्ति (अभ्यास) अधूरी और त्रुटिपूर्ण हो सकती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि साधक के लिए साधना (पटिपत्ति) का आधार परियत्ति है। अगर परियत्ति सही होगी, तो पटिपत्ति भी सही दिशा में होगी। इस प्रकार, धम्म के अभ्यास में परियत्ति का महत्व अनिवार्य और अपरिहार्य है। विपश्यना साधना में सतिपट्ठान, अनिच्चा, दुक्ख, अनत्ता इन तत्त्वों की सैद्धांतिक समझ परियत्ति से प्राप्त होती है। यदि साधक परियत्ति से रहित हो, तो विपश्यना केवल एक मानसिक तकनीक बनकर रह जाती है, उसकी धम्ममूलकता लुप्त हो जाती है। वर्तमान युग में यदि विपश्यना साधना शुद्ध रूप में उपलब्ध है, तो इसका श्रेय उस परियत्ति को है जिसे पालि विनय और सुत्त के माध्यम से संरक्षित रखा गया। गोएनका जी स्वयं अपने प्रवचनों में त्रिपिटक की परियत्ति को बार-बार उद्धृत करते करते हुए कहते हैं कि **''अनिच्चा वत सङ्खारा, उप्पादवयधम्मिनो। उप्पज्जित्वा निरुज्झन्ति, तेसं वूपसमो सुखो''ति।।** इस प्रकार परियत्ति के एक-एक शब्द में कितनी मूल्यवत्ता है, क्योंकि वह शुद्ध धम्म को जीवित रखता है। परियत्ति विपश्यना साधना की नाव की पतवार है। बिना परियत्ति के, साधना दिशाहीन हो जाती है। विपश्यना के अभ्यास में सम्पजञ्ञ (स्मृति व ज्ञान) तभी आता है जब साधक परियत्ति से समझता है कि यह अनुभव अनिच्चा, दुक्ख, अनत्ता का ही रूप है।

पटिपत्ति:

पटिपत्ति बुद्ध धम्म का प्रायोगिक पक्ष है, जिसका तात्पर्य स्मृति सम्प्रजन्य के साथ चार सतिपट्ठान, चार सम्यक प्रधान, चार ऋद्धिपाद, पांच इन्द्रिय, पांच बल, सात बोध्यंग और आर्य अष्टांगिक मार्ग का अभ्यास कर लेना है। तथा सभी धर्मों का स्वभाव पटिवेधन है। पटिपत्ति का विवरण देते हुए विभङ्ग-अनुटीका में कहा गया है कि '**सतिपट्ठानादीसु सम्मामनसिकारो इमाय पटिपत्तिया होतीति।**[8] अर्थात सतिपट्ठान आदि का ठीक यथार्थ चिन्तन करके अभ्यास करना यानी कि विपश्यना करना ही पटिपत्ति है। जब हम विपश्यना साधना करते हैं तो बुद्ध की शिक्षाओं को अपने जीवन में उतारने का कार्य करते है, अर्थात् पटिपत्ति से हम **दुक्खा, अनिच्चा, अनत्ता** को अपने व्यवहार में लाते हैं। **परियत्ति पटिपत्तिया पच्चयो होति**[9] यह स्पष्ट करता है कि ज्ञान और आचरण के बीच एक गहरा संबंध है। **परियत्तियाहि अन्तरहिताय पटिपत्ति अन्तरधायति** अर्थात् परियत्ति के लुप्त होने पर पटिपत्ति लुप्त हो जाती है। वस्तुतः ज्ञान और अभ्यास दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। बिना उचित ज्ञान के, अभ्यास अधूरा या गलत हो सकता है। इसलिए, साधक को अपने अध्ययन (परियत्ति) और अभ्यास (पटिपत्ति) दोनों को समान रूप से महत्व देना चाहिए ताकि वह धम्म के मार्ग पर सही ढंग से चल सके। गोयंकाजी कहते हैं कि विपश्यना कोई कर्मकांड नहीं, यह पटिपत्ति है, जीने की कला है। इसे करने से भीतर का अज्ञान जलता है, विकार गलते हैं, और चित्त निर्मल होती है। परियत्ति हमें बताती है, लेकिन पटिपत्ति हमें बदलती है। शीलों का नियमित पालन पटिपत्ति का प्रथम चरण है। जिसके द्वारा मन की स्थिरता, नैतिकता और संयम की भूमि तैयार होती है। विपश्यना का पूर्वारम्भ आनापानसति (श्वास पर ध्यान) के द्वारा होता है, जिससे चित्त एकाग्र और शुद्ध होता है। यह अभ्यास पटिपत्ति का दूसरा चरण है, जो "चित्त विसुद्धि" की ओर ले जाता है। प्रज्ञा अंतिम चरण है, जिसे पटिपत्ति का मूल कहते हैं, जहां शरीर-मन के अनित्य, दुःख, अनात्म के यथाभूत लक्षणों का अवलोकन किया जाता है। पटिपत्ति विपश्यना साधना की रीढ़ है। यह केवल बौद्धिक समझ नहीं, जीवन में उतरा हुआ सत्य है। परियत्ति के बिना दृष्टिकोण अधूरा है, लेकिन पटिपत्ति के बिना मुक्ति असम्भव है। इसलिए, विपश्यना में पटिपत्ति शील, समाधि और प्रज्ञा का सतत अभ्यास वह जीवित धर्म है जिससे न केवल दुःख की जड़ कटती है, बल्कि निर्वाण का मार्ग प्रशस्त होता है।

पटिवेधन:

पटिवेधन वह स्थिति है जहाँ साधक शील, समाधि और प्रज्ञा के अभ्यास के माध्यम से, शरीर-मन की यथाभूत प्रकृति का अनुभव से साक्षात्कार करता है। विपश्यना का अभ्यास सही मार्ग है, लेकिन जब साधक भावनात्मक स्तर पर अनित्य को स्वयं अनुभव करता है और उसकी सारी विकृतियाँ शांत होती हैं, वहीं पटिवेधन प्रारंभ होता है। पटिवेधन के विषय में **अभिधम्मावतार पुराण-टीका** में उल्लेख किया कहा गया है कि **सभावपटिवेधन**न्ति अर्थात् स्वभाव ही पटिवेधन है। **सभावसामञ्ञलक्खणपटिवेधन** अर्थात् किसी वस्तु के स्वाभाविक गुण, उसकी समानता और लक्षणों का प्रत्यक्ष अनुभव करना ही पटिवेधन है। पटिवेधन साधक को निर्वाण की ओर ले जाने वाला एक महत्वपूर्ण साधन है। बुद्ध ने बताया कि केवल परियत्ति या पटिपत्ति ही पर्याप्त नहीं है; साधक को उन सिद्धांतों का अनुभव भी करना होगा जिससे साधक अपने दुखों से मुक्त हो करके निर्वाण की अवस्था में स्थापित हो सके। सारतः **पटिवेध** का अर्थ है धम्म का प्रत्यक्ष अनुभव, यानी कि बौद्धिक ज्ञान और व्यवहारिक अभ्यास के

परिणामस्वरूप, व्यक्ति को धम्म के गहरे सत्य का प्रत्यक्ष अनुभव होता है। यह अंतिम और सर्वोच्च चरण है, जहाँ व्यक्ति धम्म को अनुभव करता है और निर्वाण की प्राप्ति की ओर अग्रसर होता है। **निब्बानधिगमाय पटिपत्तिया** अर्थात् पटिपत्ति वह मार्ग या उपाय जो निब्बान की प्राप्ति की दिशा में ले जाता है।

संयुत्तनिकाय टीका में कहा गया है कि **परियत्तिपटिपत्तिपटिवेधलक्खणं सासनं।** अर्थात परियत्ति, पटिपत्ति और पटिवेधन को बुद्ध की शिक्षा का लक्षण कहा गया है। **अद्धा इमाय पटिपत्तिया सकलसासनसम्पत्ति हत्थगता भविस्सती'**[10] अर्थात् निश्चित रूप से इस पटिपत्ति के द्वारा सम्पूर्ण सासन की सम्पूर्णता प्राप्त होगी। सासन वंस में कहा गया है कि **'तीसु सासनेसु परियत्तिसासने तिट्ठन्तेयेव पटिपत्ति सासनं तिट्ठति, पटिपत्तिसासने तिट्ठन्तेयेव पटिवेधसासनं तिट्ठति'**[11] अर्थात् परियत्ति, पटिपत्ति और पटिवेध ये तीन बुद्ध सासन है, **परियत्ति तिट्ठन्तेयेव** यानी कि जो बुद्ध उपदेशों का संग्रह है, उसके अध्ययन में स्थिर रहने पर **पटिपत्ति सासनं तिट्ठति** अर्थात् बुद्ध उपदेशों को अपने जीवन में उतारने के लिए निरन्तर विपश्यना साधना में स्थिर रहता है। तब **पटिवेध सासनं तिट्ठति** होता है अर्थात् धर्म का प्रत्यक्ष ज्ञान स्थायी होता है। पटिवेधन, विपश्यना साधना की चरमावस्था है, यह न तो बौद्धिक है, न भावनात्मक; यह पूर्णतया आत्म-प्रेरित, अनुभूत, शुद्ध चित्त का साक्षात्कार है। यह वही अवस्था है जहाँ शील और समाधि के सहारे बुद्ध का "यथाभूतज्ञानदर्शन" प्रकट होता है।

निष्कर्ष:

इस प्रकार परियत्ति ज्ञान का प्रथम सैद्धांतिक चरण है, जिसमें बुद्ध वचनो का अध्ययन किया जाता है। यह मानसिक स्तर पर बुद्ध धम्म को समझने की प्रक्रिया है। पटिपत्ति धर्म का दूसरा चरण है जिसमें साधक बुद्ध की शिक्षाओं का अपने दैनिक जीवन और साधना में लागू करता है। इसमें नैतिक आचरण, ध्यान और विपश्यना का अभ्यास मुख्य रूप से आता है। जबकि पटिवेध अंतिम चरण है, इसमें साधक अपने अभ्यास के माध्यम से धर्म के सत्य को प्रत्यक्षतः अनुभव करता है। इसे अंतर्दृष्टि या साक्षात ज्ञान की अवस्था भी कहा जाता है, जो निब्बान की ओर ले जाती है। शाक्यमुनि भगवान बुद्ध के उपदेशों का सम्यक् अध्ययन, ज्ञान एवं अभ्यास सम्पूर्ण और संतुलित रूप से जीवन जीने हेतु आवश्यक है जीवन में इसका पालन करने से न केवल व्यक्ति बल्कि समाज और सम्पूर्ण मानवता के लिए कल्याणकारी है। यह जीवन के समग्र विकास और उन्नति का एक साधन भी है। पटिपत्ति के माध्यम से, व्यक्ति न केवल स्वयं को बल्कि समाज को भी लाभ पहुंचाता है, जिससे एक संतुलित और सामंजस्यपूर्ण जीवन की स्थापना होती है। पटिवेधन के माध्यम से साधक न केवल अपने ज्ञान को विस्तारित करते हैं, बल्कि वे अपने भीतर की वास्तविकता को भी समझते हैं। यह अनुभव उन्हें व्यक्तिगत विकास, नैतिकता, और समाज के प्रति उत्तरदायित्व का एहसास कराता है।

अतः बुद्ध के सासन के परियत्ति, पटिपत्ति, और पटिवेधन ये तीन अति महत्वपूर्ण लक्षण है।

1. **परियत्ति**— ज्ञान और धम्म का अध्ययन।
2. **पटिपत्ति**— उस अध्ययन को आचरण में लाना।
3. **पटिवेध**— अंतिम सत्य का प्रत्यक्ष अनुभव और निर्वाण की प्राप्ति।

इन तीनों के संयोजन से ही बुद्ध शासन का पूरा रूप प्रकट होता है। जिससे व्यक्ति निर्वाण में प्रतिस्थापित होता है। और सही माने में बुद्ध शासन पूरा होता है।

---

[1] सम्मोहविनोदनी-अट्ठकथा, पटिसम्भिदाविभङ्गो, सुत्तन्तभाजनीयं, अनु. सं. 718।
[2] विमतविनोदनी-टीका (पठमो भागो), गन्थारम्भकथावण्णना,
[3] अङ्गुत्तरनिकाय-अट्ठकथा, एककनिपात, दुतियपमादादिवग्गवण्णना, अनु. सं. 130।
[4] सम्मोहविनोदनी, पटिसम्भिदाविभङ्गो, अनु. सं. 718, विपश्यना विशोधन विन्यास, धम्मगिरी इगतपुरी।
[5] संयुत्तनिकाय अट्ठकथा, सद्धम्मप्पतिरूपकसुत्तवण्णना, अनु. सं. 156, विपश्यना विशोधन विन्यास, धम्मगिरी इगतपुरी।
[6] अङ्गुत्तरनिकाय-टीका, गोमतीवग्गो, अनु. सं. 51, विपश्यना विशोधन विन्यास, धम्मगिरी इगतपुरी।
[7] अङ्गुत्तरनिकाय-टीका, गोमतीवग्गो, अनु. सं. 53, विपश्यना विशोधन विन्यास, धम्मगिरी इगतपुरी।
[8] विभङ्ग-मूलटीका, खन्धविभङ्गो, सुत्तन्तभाजनीयवण्णना, अनु. सं. 1।
[9] अङ्गुत्तरनिकाय-टीका, गोमतीवग्गो, अनु. सं. 51, विपश्यना विशोधन विन्यास, धम्मगिरी इगतपुरी।
[10] संयुत्तनिकाय-टीका, निदानसंयुत्त, अनु. सं.1, विपश्यना विशोधन विन्यास, धम्मगिरी इगतपुरी।
[11] सासनवंस, अपरन्तरट्ठसासनवंसकथामग्गो,विपश्यना विशोधन विन्यास, धम्मगिरी इगतपुरी।